श्रीमद् भागवत का यह सार
भगवद् भक्ति ही आधार

श्रीमद् भागवत रसिक कुटुंब

गजेन्द्र मोक्ष(भागवत मुखस्थ परीक्षा हेतु)

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

अष्टमः(स्) स्कंधः

॥ अथ तृतीयोऽध्यायः ॥

गजेन्द्र उवाच

ॐ नमो भगवते तस्मै, यत एतच्चिदात्मकम्।

पुरुषायादिबीजाय, परेशायाभिधीमहि ॥ 1 ॥

श्री-गजेन्द्रः उवाच–गजेन्द्र ने कहा;ॐ– हे भगवान्; नमः– मैं सादर नमस्कार करता हूँ; भगवते– भगवान् को; तस्मै—उस; यतः—जिनसे; एतत्- यह शरीर तथा भौतिक जगत; चित्-आत्मकम् - चेतना (आत्मा) के कारण गतिशील; पुरुषाय — परम पुरुष को; आदि-बीजाय– जो उद्गम या प्रत्येक वस्तु के मूल कारण हैं, उन्हें; पर-ईशाय- परम, दिव्य तथा पूज्य;-अभिधीमहि—उनका ध्यान करता हूँ ।

यस्मिन्निदं(यँ) यतश्चेदं(यँ), येनेदं(यँ) य इदं(म्) स्वयम्।

योऽस्मात् परस्माच्च परस्- तं(म्) प्रपद्ये स्वयम्भुवम् ॥ 2 ॥

यस्मिन्— जिस मूल पद पर; इदम्- यह ब्रह्माण्ड टिका है;यतः- जिन अवयवों से; च- तथा; इदम्- यह विराट विश्व बना है; येन—जिसके द्वारा; इदम्- यह विराट विश्व रचित तथा पालित है; यः– जो; इदम् — यह भौतिक जगत है; स्वयम्- स्वयं; यः– जो; अस्मात्— इस भौतिक जगत (फल) से; परस्मात्- कारण से; च- तथा; परः- दिव्य या भिन्न; तम्— उस; प्रपद्ये- शरण में जाता हूँ; स्वयम्भुवम्- आत्म-निर्भर की

यः(स्) स्वात्मनीदं(न्) निजमाययार्पितं(ङ्),

क्वचिद् विभातं(ङ्) क्व च तत् तिरोहितम्।

अविद्धदृक् साक्ष्युभयं(न्) तदीक्षते,

स आत्ममूलोऽवतु मां(म्) परात्परः ॥ 3 ॥

यः—जो भगवान्; स्व-आत्मनि— अपने में; इदम्- इस विराट जगत को; निज-मायया– अपनी निजी शक्ति से; अर्पितम्— लगा हुआ; क्वचित्— कभी-कभी, कल्प के प्रारम्भ में; विभातम्— प्रकट होता है; क्व च- कभी-कभी, प्रलय के समय; तत्—वह (जगत); तिरोहितम्– अदृश्य; अविद्ध-दृक् - वह सब कुछ देखता है (इन सभी परिस्थितियों में); साक्षी– गवाह; उभयम्—दोनों (उत्पत्ति तथा प्रलय); तत् ईक्षते- दृष्टि की हानि के बिना सब कुछ देखता है; सः– वह भगवान्; आत्म-मूलः- आत्मनिर्भर, अन्य कारण न होने पर; अवतु- कृपया हमें संरक्षण दें; माम्– मुझको; परात्परः- दिव्य से भी दिव्य, समस्त अध्यात्म से परे।

कालेन पञ्चत्वमितेषु कृत्स्नशो,

लोकेषु पालेषु च सर्वहेतुषु।

तमस्तदाऽऽसीद् गहनं(ङ्) गभीरं(यँ),

यस्तस्य पारेऽभिविराजते विभुः ॥ 4 ॥

कालेन- कालान्तर में (लाखों वर्ष बाद); पञ्चत्वम्– जब प्रत्येक मायावी वस्तु विनष्ट हो जाती है; इतेषु- सारे विकार; कृत्स्नशः—इस दृश्य जगत के भीतर की प्रत्येक वस्तु सहित; लोकेषु– सारे लोकों में, या इनमें स्थित हर वस्तु में; पालेषु– ब्रह्मा जैसे पालनकर्ताओं में; च- भी; सर्व-हेतुषु- सारे कारणों में; तमः- महान् अंधकार; तदा- तब; आसीत्- था; गहनम्—अत्यन्त घना; गभीरम्— अत्यन्त गहरा; यः– जो भगवान्; तस्य –इस अंधकारपूर्ण स्थिति के; पारे– इसके अतिरिक्त; अभिविराजते— स्थित है या चमकता है; विभुः- परमेश्वर ।

न यस्य देवा ऋषयः(फ्) पदं(वँ) विदुर्-

जन्तुः(फ्) पुनः(ख्) कोऽर्हति गन्तुमीरितुम्।

यथा नटस्याकृतिभिर्विचेष्टतो,

दुरत्ययानुक्रमणः(स्) स मावतु ॥ 5 ॥

न—न तो; यस्य—जिसका; देवाः– देवतागण; ऋषयः- बड़े-बड़े मुनि; पदम्- पद; विदुः- समझ सकते हैं; जन्तुः-पशुओं के समान बुद्धिहीन जीव; पुनः– फिर; कः– कौन; अर्हति– समर्थ है; गन्तुम्— ज्ञान में प्रवेश

करने में;ईरितुम्—अथवा शब्दों द्वारा व्यक्त करने में; यथा-जिस प्रकार; नटस्य- कलाकार के; आकृतिभिः- शारीरिक स्वरूप से; विचेष्टतः-विभिन्न प्रकार से नाचते हुए; दुरत्यय–अत्यन्त कठिन; अनुक्रमणः- उसकी गतियाँ; सः- वही भगवान्; मा– मुझको; अवतु- संरक्षण प्रदान करें।

दिदृक्षवो यस्य पदं(म्) सुमंगलं(वँ),

विमुक्तसङ्गा मुनयः(स्) सुसाधवः।

चरन्त्यलोकव्रतमव्रणं(वँ) वने,

भूतात्मभूताः(स्) सुहृदः(स्) स मे गतिः ॥ 6 ॥

दिदृक्षवः–(भगवान् को) देखने के इच्छुक; यस्य–जिसके;पदम्— चरणकमल; सु-मङ्गलम्— कल्याणप्रद; विमुक्त-सङ्गाः—भौतिक दशाओं से पूरी तरह मुक्त; मुनयः– मुनिगण; सु-साधवः- आध्यात्मिक चेतना में बढ़े - चढ़े; चरन्ति– अभ्यास करते हैं; अलोक-व्रतम्- ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ या संन्यास के व्रत; अव्रणम्- बिना किसी त्रुटि के; वने- वन में; भूत-आत्म- भूताः- जो समस्त जीवों के प्रति समान भाव रखते हैं; सुहृदः– जो सबों के मित्र हैं; सः- वही भगवान्; मे- मेरा; गतिः-गन्तव्य।

न विद्यते यस्य च जन्म कर्म वा,

न नामरूपे गुणदोष एव वा।

तथापि लोकाप्ययसंभवाय यः(स्),

स्वमायया तान्यनुकालमृच्छति ॥ 7 ॥

तस्मै नमः(फ्) परेशाय, ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये।

अरूपायोरुरूपाय, नम आश्चर्यकर्मणे ॥ 8 ॥

न— नहीं; विद्यते— विद्यमान है; यस्य - जिसका (भगवान् का); च- भी; जन्म– जन्म; कर्म- कर्म; वा– अथवा; न—न तो; नाम-रूपे– कोई नाम या भौतिक स्वरूप; गुण– गुण; दोषः– त्रुटि; एव– निश्चय ही; वा — अथवा; तथापि- फिर भी;लोक—इस दृश्य जगत का; अप्यय– विनाश; सम्भवाय— तथा सृष्टि; यः– जो; स्व-मायया– अपनी निजी शक्ति से; तानि— कार्यों को; अनुकालम्- शाश्वत रीति से; ऋच्छति- स्वीकार करता है; तस्मै– उसको;नमः- नमस्कार करता हूँ; पर-दिव्य;ईशाय— परमनियन्ता को; ब्रह्मणे- परब्रह्म को;

अनन्त-शक्तये- असीमित शक्ति से; अरूपाय– निराकार; उरु-रूपाय— अवतारों के विविध रूपों वाला; नमः- नमस्कार करता हूँ; आश्चर्य-कर्मणे- जिनके कार्य अद्भुत होते हैं।

नम आत्मप्रदीपाय, साक्षिणे परमात्मने।

नमो गिरां(वँ) विदूराय, मनसश्चेतसामपि ॥ 9 ॥

नमः- मैं नमस्कार करता हूँ; आत्म-प्रदीपाय-आत्म-प्रकाशित को या जीवों को प्रकाश देने वाले को; साक्षिणे- प्रत्येक के हृदय में साक्षी स्वरूप स्थित; परम-आत्मने — परमात्मा में; नमः- नमस्कार करता हूँ; गिराम्- वाणी से; विदूराय- अत्यन्त दूर, अगम्य; मनसः– मन से; चेतसाम्- या चेतना से; अपि— भी।

सत्त्वेन प्रतिलभ्याय, नैष्कर्म्येण विपश्चिता।

नमः(ख्) कैवल्यनाथाय, निर्वाणसुखसं(वँ)विदे ॥ 10॥

सत्त्वेन– शुद्ध भक्ति से;प्रति- लभ्याय- भगवान् को, जो ऐसी भक्ति से प्राप्त किये जाते हैं; नैष्कर्म्येण- दिव्य कार्यों से;विपश्चिता—अत्यन्त विद्वान व्यक्तियों द्वारा; नमः- नमस्कार करता हूँ; कैवल्य- नाथाय– दिव्यलोक के स्वामी को; निर्वाण- भौतिक कार्यों से पूर्ण मुक्ति; सुख-सुख का; संविदे— प्रदान करने वाला।

नमः(श्) शान्ताय घोराय, मूढाय गुणधर्मिणे ।

निर्विशेषाय साम्याय, नमो ज्ञानघनाय च ॥ 11 ॥

नमः- नमस्कार; शान्ताय- जो समस्त भौतिक गुणों से ऊपर है और पूर्णतया शान्त है उसे अथवा प्रत्येक जीव में वास करने वाले परमात्मा स्वरूप वासुदेव को;घोराय- भगवान् के भयानक रूपों को यथा जामदग्न्य तथा नृसिंह देव को; मूढाय- पशु रूप में भगवान् के स्वरूप को यथा वराह को; गुण-धर्मिणे- जो भौतिक जगत में विभिन्न गुण स्वीकार करता है; निर्विशेषाय– भौतिक गुणों से विहीन और पूर्णतया आध्यात्मिक; साम्याय- भगवान् बुद्ध को जो निर्वाण रूप हैं, जहाँ भौतिक कार्यकलाप रुक जाते हैं;नमः– मैं सादर नमस्कार करता हूँ; ज्ञान-घनाय- ज्ञान या निर्विशेष ब्रह्म को; च– भी।

क्षेत्रज्ञाय नमस्तुभ्यं(म्), सर्वाध्यक्षाय साक्षिणे।

पुरुषायात्ममूलाय, मूलप्रकृतये नमः ॥ 12 ॥

क्षेत्र-ज्ञाय-बाह्य शरीर की प्रत्येक वस्तु जानने वाले को; नमः- मैं नमस्कार करता हूँ; तुभ्यम्– तुमको;सर्व– सब कुछ;अध्यक्षाय– अध्यक्ष को; साक्षिणे- जो साक्षी परमात्मा या अन्तर्यामी हैं;पुरुषाय- परम पुरुष को; आत्म-मूलाय- मूल स्रोत को; मूल-प्रकृतये- पुरुष- अवतार को, जो प्रकृति तथा प्रधान का उद्गम है;नमः- मैं नमस्कार करता हूँ ।

सर्वेन्द्रियगुणद्रष्ट्रे, सर्वप्रत्ययहेतवे।

असताच्छाययोक्ताय, सदाभासाय ते नमः ॥ 13 ॥

सर्व-इन्द्रिय-गुण-द्रष्ट्रे– सभी इन्द्रिय-विषयों के द्रष्टा में; सर्व-प्रत्यय-हेतवे- सभी संशयों के समाधान (और जिनके बिना सभी असमर्थताएँ तथा सारे संदेह हल नहीं किये जा सकते);असता- असत्य या भ्रम के प्रकट होने से; छायया- समानता के कारण; उक्ताय—कहलाया; सत्— सत्य का; आभासाय- प्रतिबिम्ब के लिए; ते- तुमको; नमः हे भगवान्!- नमस्कार करता हूँ।

नमो नमस्तेऽखिलकारणाय,

निष्कारणायाद्भुतकारणाय।

सर्वागमाम्नायमहार्णवाय,

नमोऽपवर्गाय परायणाय ॥ 14 ॥

नमः- मैं नमस्कार करता हूँ; नमः- पुनः नमस्कार करता हूँ; ते- तुम्हें; अखिल-कारणाय– हर वस्तु के परम कारण को; निष्कारणाय—कारणरहित को; अद्भुत-कारणाय- हर वस्तु के अद्भुत कारण को;सर्व– समस्त;आगम-आम्नाय- वैदिक वाङ्मय की परम्परा पद्धति के स्रोत को;महा-अर्णवाय-ज्ञान के विशाल सागर को अथवा उस विशाल समुद्र को जिसमें ज्ञान की समस्त सरिताएँ मिलती हैं;नमः-नमस्कार करता हूँ;अपवर्गाय- मोक्ष दाता को;पर-अयणाय- समस्त अध्यात्मवादियों के आश्रय को ।

गुणारणिच्छन्नचिदूष्मपाय,

तत्क्षोभविस्फूर्जितमानसाय।

नैष्कर्म्यभावेन विवर्जितागम-

स्वयंप्रकाशाय नमस्करोमि ॥ 15 ॥

गुण- प्रकृति के तीन गुणों(सत्त्व, रजस् तथा तमस्)द्वारा;**अरणि**- अरणि काष्ठ द्वारा; **छन्न**– आवृत; **चित्**— ज्ञान का; **उष्मपाय**- उसको जिसकी अग्नि; **तत्-क्षोभ**- प्रकृति के तीनों गुणों के क्षोभ से; **विस्फूर्जित**- बाहर; **मानसाय**—उसको जिसका मन; **नैष्कर्म्य-भावेन**-आध्यात्मिक ज्ञान की अवस्था के कारण; **विवर्जित**- त्याग देने वालों में; **आगम**- वैदिक सिद्धान्त; **स्वयम्**—स्वयं; **प्रकाशाय**- जो प्रकट है उसको;**नमः करोमि**- मैं सादर नमस्कार करता हूँ ।

माद्दक्प्रपन्नपशुपाशविमोक्षणाय,
मुक्ताय भूरिकरुणाय नमोऽलयाय।
स्वां(म्)शेन सर्वतनुभृन्मनसि प्रतीत-
प्रत्यग्द्दशे भगवते बृहते नमस्ते ॥ 16 ॥

माद्दक्—मेरे समान; **प्रपन्न**– शरणागत; **पशु**– पशु; **पाश**- बन्धन से; **विमोक्षणाय**– छुड़ाने वाले को;**मुक्ताय** — प्रकृति के कल्मष से अछूते परमेश्वर को;**भूरि-करुणाय**- असीम दयालु को;**नमः**- नमस्कार करता हूँ; **अलयाय**- कभी भी असावधान या अकर्मण्य न रहने वाले को (मेरे उद्धार के लिए);**स्व-अंशेन**– आपके परमात्मा रूप अंश से;**सर्व**- सबों का;**तनु-भृत्**— प्रकृति में देहधारी जीव;**मनसि**- मन में;**प्रतीत**— कृतज्ञ; **प्रत्यक्-द्दशे**-(समस्त कार्यों के) प्रत्यक्ष द्रष्टा के रूप में;**भगवते**-भगवान् को; बृहते—असीम; **नमः**- नमस्कार करता हूँ; **ते** — तुमको।

आत्मात्मजाप्तगृहवित्तजनेषु सक्तैर्-
दुष्प्रापणाय गुणसङ्गविवर्जिताय।
मुक्तात्मभिः(स्) स्वहृदये परिभाविताय,
ज्ञानात्मने भगवते नम ईश्वराय ॥ 17 ॥

आत्म—मन तथा शरीर;**आत्म-ज**- पुत्र तथा पुत्रियाँ;**आप्त**- मित्र तथा सम्बन्धी; **गृह**– घर, जाति, समाज तथा राष्ट्र;**वित्त**— धन;**जनेषु**—विभिन्न दास तथा सहायक तक;**सक्तैः**- आसक्त लोगों द्वारा; **दुष्प्रापणाय**- आपको, जो दुष्प्राप्य हैं;**गुण-सङ्ग**- तीन गुणों द्वारा;**विवर्जिताय**- कलुषित न होने वाले को;**मुक्त- आत्मभिः**- पहले से मुक्त हुए पुरुषों के द्वारा;**स्व-हृदये**-अपने हृदय के भीतर;**परिभाविताय**- ध्यान किये जाने वाले आपको;

ज्ञान-आत्मने- समस्त ज्ञान के आगार;भगवते-भगवान् को;नमः- नमस्कार करता हूँ; ईश्वराय- परमनियन्ता को

यं(न्) धर्मकामार्थविमुक्तिकामा,
भजन्त इष्टां(ङ्) गतिमाप्नुवन्ति।
किं(न्) त्वाशिषो रात्यपि देहमव्ययं(ङ्),
करोतु मेऽदभ्रदयो विमोक्षणम् ॥ 18 ॥

यम्—जिस भगवान् को;धर्म-काम-अर्थ-विमुक्ति-कामाः–ऐसे व्यक्ति जो धर्म,अर्थ,काम तथा मोक्ष इन चार सिद्धान्तों की कामना करते हैं;भजन्तः— पूजा द्वारा;इष्टाम्– लक्ष्य को;गतिम्— गन्तव्य;आप्नुवन्ति– प्राप्त कर सकते हैं;किम्-क्या कहा जाये;च– भी;आशिषः- अन्य आशीर्वाद;राति—प्रदान करता है;अपि– भी;देहम्- शरीर को;अव्ययम्— आध्यात्मिक;करोतु- आशीष दें;मे – मुझको;अदभ्र-दयः- अत्यधिक दयालु भगवान्; विमोक्षणम्- वर्तमान संकट से तथा भौतिक जगत से मोक्ष

एकान्तिनो यस्य न कञ्चनार्थं(वँ),
वाञ्छन्ति ये वै भगवत्प्रपन्नाः।
अत्यद्भुतं(न्) तच्चरितं(म्) सुमंगलं (ङ्),
गायन्त आनन्दसमुद्रमग्नाः ॥ 19 ॥
तमक्षरं(म्) ब्रह्म परं(म्) परेश-
मव्यक्तमाध्यात्मिकयोगगम्यम्।
अतीन्द्रियं(म्) सूक्ष्ममिवातिदूर-
मनन्तमाद्यं(म्) परिपूर्णमीडे ॥ 20 ॥

एकान्तिनः– अनन्य भक्त(जिन्हें कृष्णचेतना के अतिरिक्त अन्य कोई चाह नहीं रहती);यस्य-जिस भगवान् का;न– नहीं;कञ्चन—कुछ;अर्थम्– आशीष;वाञ्छन्ति– इच्छा करते हैं;ये– जो भक्त; वै– निस्सन्देह;भगवत्-प्रपन्नाः- भगवान् के चरणकमलों में पूरी तरह शरणागत;अति-अद्भुतम्- जो अद्भुत हैं;तत्-चरितम्- भगवान् के कार्यकलाप;सु-मङ्गलम्- तथा जो सुनने में अत्यन्त शुभ हैं;गायन्तः- कीर्तन तथा श्रवण द्वारा;

आनन्द- दिव्य आनन्द रूपी; समुद्र- समुद्र में; मग्नाः– डूबे हुए; तम्— उनको; अक्षरम्— अक्षर; ब्रह्म- ब्रह्म; परम्– दिव्य;पर-ईशम्- परम पुरुषों के स्वामी को;अव्यक्तम्- अदृश्य अथवा मन तथा इन्द्रियों से अनुभव न किए जा सकने वाले; आध्यात्मिक- दिव्य; योग- भक्ति योग द्वारा; गम्यम्- प्राप्य(भक्त्या मामभिजानाति);अति-इन्द्रियम्- भौतिक इन्द्रियों की अनुभूति से परे;सूक्ष्मम्— सूक्ष्म; इव– सदृश; अति-दूरम्- अत्यन्त दूर; अनन्तम्—असीम; आद्यम्– आदि कारण को; परिपूर्णम्– सर्वतः पूर्ण; ईडे - मैं नमस्कार करता हूँ ।

यस्यं ब्रह्मादयो देवा, वेदा लोकाश्चराचराः।
नामरूपविभेदेन, फल्व्या च कलया कृताः ॥ 21 ॥
यथार्चिषोऽग्नेः(स्) सवितुर्गभस्तयो,
निर्यान्ति संयान्त्यसकृत् स्वरोचिषः।
तथा यतोऽयं(ङ्) गुणसंप्रवाहो,
बुद्धिर्मनः(ख्) खानि शरीरसर्गाः ॥ 22 ॥
स वै न देवासुरमर्त्यतिर्यं(ङ्),
न स्त्री न षण्ढो न पुमान् न जन्तुः।
नायं(ङ्) गुणः(ख्) कर्म न सन्न चासन्,
निषेधशेषो जयतादशेषः ॥ 23 ॥

यस्य– भगवान् का; ब्रह्म-आदयः- ब्रह्मा इत्यादि देवता; देवाः- तथा अन्य देवता; वेदाः- वैदिक ज्ञान; लोकाः- विभिन्न पुरुष; चर-अचराः– जड़ (यथा वृक्ष) तथा चेतन; नाम-रूप- विभिन्न नामों तथा विभिन्न रूपों के; विभेदेन– ऐसे विभागों द्वारा; फल्व्या—कम महत्त्वपूर्ण; च– भी;कलया- अंशों से;कृताः– उत्पन्न; यथा– जिस तरह; अर्चिषः- स्फुलिंग;अग्नेः– अग्नि के;सवितुः- सूर्य से;गभस्तयः- चमकीले कण; निर्यान्ति- बाहर निकलते हैं; संयान्ति- तथा प्रवेश करते हैं; असकृत्— पुनः पुनः; स्व- रोचिषः- अंशरूप; तथा- उसी प्रकार से; यतः- भगवान् जिससे;अयम्- यह;गुण- सम्प्रवाहः प्रकृति के विभिन्न गुणों का निरन्तर प्राकट्य; बुद्धिः मनः- बुद्धि तथा मन;खानि-इन्द्रियाँ;शरीर-शरीर की(स्थूल तथा सूक्ष्म);सर्गाः–विभाग;सः-वह परमात्मा; वै– निस्सन्देह; न– नहीं है;देव- देवता;असुर-असुर;मर्त्य– मनुष्य;तिर्यक्— पक्षी या पशु;न– न तो; स्त्री— स्त्री;न– न तो; षण्ढः– क्लीव;न – न तो; पुमान्– मनुष्य;न—न तो;जन्तुः— जीव या पशु;न अयम्— न तो वह है;गुणः–

भौतिक गुण;कर्म– सकाम कर्म;न– न तो;सत्– प्राकट्य;न– न तो; च- भी;असत्— अप्राकट्य;निषेध- नेति नेति का भेदभाव;शेषः- वह अन्त है;जयतात्— उनकी जय हो;अशेषः– जो अनन्त है ।

जिजीविषे नाहमिहामुया कि-
मन्तर्बहिश्चावृतयेभयोन्या।
इच्छामि कालेन न यस्य विप्लवस्-
तस्यात्मलोकावरणस्य मोक्षम् ॥ 24 ॥

जिजीविषे– दीर्घकाल तक रहने की इच्छा;न— नहीं;अहम्— मैं;इह — इस जीवन में;अमुया- या अगले जीवन में(इस संकट से बच जाने पर मैं जीना नहीं चाहता);किम्- क्या लाभ; अन्तः- भीतर से; बहिः-बाहर से; च- तथा; आवृतया— अज्ञान से आच्छादित; इभ-योन्या– हाथी रूप इस जन्म में;इच्छामि-मेरी इच्छा है; कालेन-कालके प्रभावसे;न–नहीं है;यस्य— जिसका;विप्लवः- संहार;तस्य— उस;आत्म-लोक- आवरणस्य- आत्म-साक्षात्कार के आवरण से; मोक्षम्— मोक्ष

सोऽहं(वँ) विश्वसृजं(वँ) विश्व-
मविश्वं(वँ) विश्ववेदसम्।
विश्वात्मानमजं(म्) ब्रह्म,
प्रणतोऽस्मि परं(म्) पदम् ॥ 25 ॥

सः—वह;अहम्—मैं(भौतिक जीवन से छुटकारा चाहने वाला);विश्व-सृजम्— इस विश्व का सृजन करने वाले को;विश्वम्— जो स्वयं सम्पूर्ण विश्व स्वरूप है;अविश्वम्— विश्व से परे;विश्व-वेदसम्- इस विश्व के ज्ञाता को या इस विश्व के अवयव को;विश्व-आत्मानम्— विश्व की आत्मा को;अजम्- अजन्मा को;ब्रह्म- परम; प्रणतः-अस्मि -नमस्कार करता हूँ;परम्- दिव्य;पदम्— आश्रय, शरण।

योगरन्धितकर्माणो, हृदि योगविभाविते।
योगिनो यं(म्) प्रपश्यन्ति, योगेशं(न्) तं(न्) नतोऽस्म्यहम् ॥ 26 ॥

योग-रन्धित-कर्माणः— ऐसे व्यक्ति जिनके सकाम कर्मों के फल भक्तियोग द्वारा जलाये जा चुके हैं;हृदि– हृदय में;योग-विभावित-पूर्णतः शुद्ध तथा विमल; योगिनः– दक्ष योगी; यम्– भगवान् को; प्रपश्यन्ति- प्रत्यक्ष

दर्शन करते हैं; योग-ईशम्- समस्त योग के स्वामी, भगवान् को;तम्— उसको;नतः-अस्मि- नमस्कार करता हूँ;अहम् — मैं

नमो नमस्तुभ्यमसह्यवेग-
शक्तित्रयायाखिलधीगुणाय।
प्रपन्नपालाय दुरन्तशक्तये,
कदिन्द्रियाणामनवाप्यवर्त्मने ॥ 27 ॥

नमः—नमस्कार करता हूँ;नमः- पुनःनमस्कार है;तुभ्यम्—तुमको; असह्य- दुस्तर; वेग- वेग, प्रवाह; शक्ति-त्रयाय- तीन शक्तियों वाले परम पुरुष को; अखिल- ब्रह्माण्ड का;धी-बुद्धि के लिए;गुणाय- इन्द्रिय-विषयों के रूप में प्रकट होने वाले;प्रपन्न-पालाय— शरणागतों को शरण देने वाले ब्रह्म को;दुरन्त-शक्तये -दुर्जय शक्ति वाले;कत्-इन्द्रियाणाम्— उन व्यक्तियों द्वारा जो इन्द्रिय-संयम करने में अक्षम हैं; अनवाप्य- दुर्लभ; वर्त्मने—पथ पर ।

नायं(वँ) वेद स्वमात्मानं(यँ), यच्छक्त्याहं(न्)धिया हतम्।
तं(न्) दुरत्ययमाहात्म्यं(म्), भगवन्तमितोऽस्म्यहम् ॥ 28 ॥

न—नहीं;अयम्—सामान्य लोग;वेद- जानते हैं;स्वम्— अपनी;आत्मानम्- पहचान;यत्-शक्त्या-जिसके प्रभाव से;अहम्— मैं स्वतंत्र हूँ;धिया- इस बुद्धि से;हतम्— पराजित या आच्छादित;तम्— उसको; दुरत्यय-समझने में कठिन;माहात्म्यम्—जिसका यश;भगवन्तम्- भगवान् का;इतः-शरण लेकर;अस्मि अहम्—मैं हूँ।

॥ इति॥

भागवत मुखस्थ परीक्षा हेतु यह पीडीएफ विशेष रूप से परीक्षार्थियों के लिए ही संकलित की गई है, अतः मूल पुस्तक में दिए गए श्लोकांक इस पीडीएफ के श्लोकांकों से भिन्न हो सकते हैं।